श्रीराम जय राम जय जय राम

पण्डित गङ्गाधर पाठक ‘मैथिल’

।। महर्षि वाल्मीकि जन्मना ब्राह्मण थे ।।

वर्त्तमान के समाजसुधारक एवं अन्त्यजोद्धारक सनातनधर्मद्रोही महाशयसमुदाय प्राचीन ऋषि-मुनियों को ढूँढ-ढूँढकर अशास्त्रीय रीति से उन्हें द्विजेतर सिद्ध करने की कुचेष्टा में संलग्न हैं । जिस अवैध अभियान में प्रसिद्ध श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण के यशस्वी कर्त्ता महर्षि वाल्मीकि भी नहीं बच पाये । अनधिकारियों के द्वारा बलपूर्वक ब्राह्मणकुलोत्पन्न महनीय, वन्दनीय आदिकवि महर्षि वाल्मीकि को चाण्डालादि बनाने का कुप्रयास अनवरत चल रहा है, जिसपर विधिवत् प्रकाश डालने के लिए इतिहास-पुराणों का अन्वेषण करके सप्रमाण महर्षि वाल्मीकि का जन्मना ब्राह्मण होना सिद्ध किया जायगा । सत्यान्वेषण करनेवाले पाठक पूर्ण मनोयोगपूर्वक पढ़ें-समझें ।

सर्वप्रथम उनके ही रामायण महाकाव्य में ७।१११।११ में उनका मौलिक परिचय देखें- ‘‘कृतवान् प्रचेतसः पुत्रस्तद्ब्रह्माऽप्यन्वमन्यत’’, ‘‘मुनिः प्राचेतसस्तदा’’ ७।९३।१६ में रामायणकर्त्ता महर्षि वाल्मीकि को प्रचेता का पुत्र कहा गया है । प्रचेता को मनुस्मृति १।३५ में ब्रह्मा अथवा मनु का पुत्र बताया गया है-

‘‘मरीचिमत्र्यङ्गिरसौ पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् । प्रचेतसं वसिष्ठं च भृगुं नारदमेव च ।।’’

रामाश्वमेध यज्ञ के अवसर पर ‘‘अयज्ञियो वा एष योऽपत्नीकः’’ इत्यादि श्रुतिवाक्यों के अनुसार यज्ञ में पत्नी का सन्निधान अनिवार्य समझकर ब्रह्मविद्वरिष्ठ श्रीवाल्मीकिजी सीताजी को जब साथ लाये, उस समय भी रामायण ७।९६।१९-२० में उन्होंने अपना परिचय दिया था-

‘‘प्रचेतसोऽहं दशमः पुत्रो राघवनन्दन । न स्मराम्यनृतं वाक्यमिमौ तु तव पुत्रकौ ।।
बहुवर्षसहस्राणि तपश्चर्या मया कृता । मनसा कर्मणा वाचा भूतपूर्वन्न किल्बिषम् ।।’’

महर्षि वाल्मीकि ने कुश, लव और सीता को लेकर श्रीराम के सामने कहा था- मैं प्रचेता का दसवाँ पुत्र हूँ, आज तक मैंने असत्य सम्भाषण किया हो, यह मेरी स्मृति में नहीं आता । मैनें सहस्रों वर्ष तपश्चर्या की है । मन, वचन और कर्म से कोई पाप मुझसे नहीं हुआ आदि ।

महर्षि वाल्मीकि का पूर्वजीवन दस्युजीवन होने पर भी जप-तप आदि से जो उनका पुनर्जीवन हुआ था, उस नवजीवन के ही सम्बन्ध में वे कहते हैं कि मैंने मन, वचन और कर्म से कभी कोई भी किल्बिष नहीं किया है । इन प्रमाणों से महर्षि वाल्मीकि श्रीराम के समकालिक भी सिद्ध होते हैं । इसमें सन्देह नहीं कि उनका कुछ समय कुसङ्गति में भी व्यतीत हुआ, जिस वृत्त को अध्यात्मरामायण २।६।६५ में उन्होंने स्वयं भी व्यक्त किया है-

‘‘अहं पुरा किरातेषु किरातैः सह वर्द्धितः । जन्ममात्रं द्विजत्वं मे शूद्राचाररतः सदा ।।’’

यहाँ वाल्मीकिजी ने ही श्रीराम को बताया है कि मैं जन्ममात्र से ब्राह्मण हूँ, छोटी आयु (या पूर्वजन्म) में मैं किरातों (भीलों) के मध्य में रहा, जिससे मेरे सभी आचरण शूद्रों जैसे हो गये । पुनः उन्होंने अध्यात्मरामायण २।६।६६ में शूद्रा स्त्री से अपने परिणय की भी बात बतायी, जिससे उनके कई पुत्र भी हुए, जैसा कि-

‘‘शूद्रायां बहवः पुत्रा उत्पन्ना मेऽजितात्मनः । ततश्चोरैश्च सङ्गेभ्यश्चौरोऽहमभवं पुरा ।।’’

मुझ अजितेन्द्रिय के द्वारा शूद्रा में बहुत से पुत्र उत्पन्न हुए । फिर चोरों के साथ रहते मैं भी चोर हो गया । इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि महर्षि वाल्मीकि जन्म से ब्राह्मण थे, परन्तु भीलों की कुसङ्गति से शूद्रवत् व्यवहार करने लगे थे । वे शूद्रा भार्या से कई सन्तान भी उत्पन्न किये ।

ध्यान देने की बात है- उक्त श्लोक में वाल्मीकि ने अपने आप को 'अजितात्मा' कहा है । यदि वे शूद्र होते तो शूद्रा में सन्तान उत्पन्न करके भी अपने आप को 'अजितात्मा' अजितेन्द्रिय क्यों कहते ? ब्राह्मण होने पर शूद्रा में सन्तान उत्पन्न करने से ही उन्हें अपने को 'अजितात्मा' कहना पड़ा है । इससे सिद्ध है कि वे जन्म से ही ब्राह्मण थे ।

चोरी करते हुए वाल्मीकिजी सप्तर्षि (या अन्य कथानक के अनुसार केवल नारदजी) के वस्त्रादि के अपहरण की इच्छा से उन्हें पकड़ने दौड़े तो वाल्मीकि को सामने आते देख कर मुनियों ने कहा- ''किमायासि द्विजाधम !'' (अध्यात्मरामायण २।६।६९) ऐ द्विजाधम ! (नीच ब्राह्मण !) तू क्यों आ रहा है ? पुनः- ''दुर्वृत्तोऽयं द्विजाधमः'' (अध्यात्मरामायण २।३।७८) यद्यपि यह नीचब्राह्मण बुरे आचरणवाला है, तथापि सन्तसम्मिलन के प्रभाव से इसने शरणागति का आश्रय लिया है, अतः इसकी रक्षा करनी चाहिए । तब मुनियों ने कृपा करके उनकी प्रकृति के अनुसार- ''इत्युक्त्वा राम ते नाम व्यत्यस्ताक्षरपूर्वकम् । एकाग्रमनसाऽत्रैव मरेति जप सर्वदा ॥'' (अ.रा.२।८।७८०) श्रीरामनाम को उलटकर जपने को कहा, जिस जप से स्वयं ही राम बन जाना स्वभाविक है और यह इस महामन्त्र का अतिशीघ्र फलप्रद विलोम जप भी हो जायगा । पश्चात् वाल्मीकिजी एकाग्रचित्त होकर 'मरा' या प्रमाणान्तर से 'राम' मन्त्र का जप करते हुए बाह्य प्रपञ्चों को भूल गये । अनन्ततोगत्वा वही विपरीत नामजप तन्त्रशास्त्र के अनुसार साधकों के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विलोम जप हो गया । इससे बहुत काल तक असङ्ग एवं निश्चल होकर रहने के कारण उनका शरीर वल्मीकमय हो गया था । पुनः चिरकाल के बाद ऋषिगण आये और उन्हें वल्मीक से निकलने की आज्ञा दी । मुनिवर निकले तो ऋषियों ने ही उनका 'वाल्मीकि' ऐसा नामकरण कर दिया । वल्मीक से उत्पन्न होने के कारण वे 'वाल्मीकि' सार्थक नामवाले हो गये । इससे सिद्ध है कि वे जन्मना ब्राह्मण ही थे, परन्तु कर्म शूद्रवाला हो गया था । पुनः विकल्प छोड़ ऋषि, महर्षि आदि पद प्राप्त करने के लिए भी जन्मना ब्राह्मण होना अनिवार्य है । मत्स्यपुराण १४५।८१ एवं ९१ में इनके लक्षण देखें-

ऋषिहिंसागतौ धातुर्विद्या सत्यं तपः श्रुतम् । एष सन्निचयो यस्माद्ब्रह्मणस्तु ततस्त्वृषिः ॥
ब्रह्मणो मानसा ह्येते उत्पन्नाः स्वयमीश्वराः । परन्त्वेनर्षयो यस्मान्मतास्तस्मान्महर्षयः ॥

ब्रह्मा के मानस पुत्र भृग्वादि ऋषिगण ब्रह्मपरत्व से युक्त होने के कारण महर्षि कहे जाते हैं, जिनमें कल्पान्तर से प्रचेता भी ब्रह्मा के पुत्र हैं- ''प्रचेतसं वसिष्ठं च'' (मनुस्मृति १।३५) और उनके अपत्य प्रसिद्ध महर्षि वाल्मीकि हुए । सनातन सिद्धान्त के अनुसार अनाद्यपौरुषेय वेदादिशास्त्रों के प्रमाण से जन्मना वर्ण-व्यवस्था ही सिद्ध है, कर्मणा नहीं । यद्यपि कल्पभेद से भिन्न-भिन्न पुराणों में श्रीवाल्मीकिजी की परिचयात्मक कथाओं में भेद भी दिखाई पड़ते हैं, परन्तु उनके ब्राह्मण नहीं होने का प्रमाण कहीं भी उपलब्ध नहीं है ।

पुनः मत्स्यपुराण १२।५१ के ''वाल्मीकिर्यस्य चरितं चक्रे भार्गवसत्तमः'' इस पद्य में भी श्रीवाल्मीकिजी को भार्गव यानी भृगुवंशी ही कहा गया है । श्रीविष्णुपुराण ३।३ में भी- ''ऋक्षोऽभूद्भार्गवस्तस्माद्वाल्मीकिर्योऽभिधीयते'' यही बात है । श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण ७।९४।२५ के अनुसार भी महर्षि वाल्मीकि को ही भार्गव कहा गया है-

''सन्निबद्धं हि श्लोकानां चतुर्विंशत्सहस्रकम् । उपाख्यानशतं चैव भार्गवेण तपस्विना ॥''

श्रीवाल्मीकिरामायण ६।७४।६१ की रामाभिरामी टीका में- ''प्राचेतसत्वेनास्यापि भार्गवत्वम्, भृगोर्वरुणपुत्रत्वाद्, भृगोर्भ्राता भार्गव इत्यन्ये'' अर्थात् प्रचेता वरुण को कहते हैं- ''प्रचेता वरुणः पाशी'' (१।१।६१) अमरकोश का भी यही कहना है । जैसे वरुण के अंश से अगस्त्य आदि का जन्म हुआ, वैसे ही महर्षि वाल्मीकि के जन्म का कथानक है । कहीं उन्हें ब्रह्मा का अवतार भी माना गया है, जैसे नारदजी ब्रह्मा का पुत्र होते हुए भी शापादि के कारण दासीपुत्र हो गये थे । उसी तरह महर्षि वाल्मीकि का कभी भृगुवंशीय ब्राह्मणों के कुल में जन्म हुआ था ।

अत: भृगुवंश में उत्पन्न होने के कारण अपत्यार्थ में उन्हें 'भार्गव' भी कहा जाता है । नागेश भट्ट के अनुसार काव्यनिर्माण में भार्गव (उशना) के समान होने से वे भार्गव कहे जाते हैं । ''कवीनामुशना कविः'' गीता १०।३७ के अनुसार उशना कवि सभी कवियों में श्रेष्ठ माने गये हैं । मनुष्यलोक में महर्षि वाल्मीकि ही आदिकवि हैं । इधर भृगु भी वरुण के ही पुत्र हैं- ''भृगुर्वै वारुणिः, भृगोर्वरुणपुत्रत्वात्, वरुणं पितरमुपससार'' (तै.उप.३।१) । ''तस्येदम्'' (पा.सू. ४।३।१२०) के अनुसार अण् प्रत्यय हुआ जिससे ''भृगोर्भ्राता भार्गवः'' भृगु के भ्राता होने से महर्षि वाल्मीकि भी भार्गव हुए और प्रचेता आदिम प्रजापति थे, तब प्राचेतस महर्षि वाल्मीकि चाण्डाल कैसे सिद्ध हो सकते हैं ? महाभारत १२।५७।४० में भी- ''श्लोकश्चायं पुरा गीतो भार्गवेण महात्मना । आख्याति रामचरिते नृपतिं प्रति भारत ।।'' भीष्मजी ने अतिप्राचीन भार्गव महर्षि वाल्मीकि के रामायण का यह श्लोक उद्धृत किया था ।

आर्षज्ञानविज्ञानसम्पन्न त्रिकालज्ञ श्रीवेदव्यास आदि महर्षियों ने अपनी ऋतम्भरा प्रज्ञा से निरीक्षण करके ही महर्षि च्यवन एवं महर्षि वाल्मीकि का वृत्तान्त लिखा है । दोनों ही के तप:संलग्न देह दीमकों द्वारा रचित वल्मीक से प्रावृत हो गये थे । दोनों के वृत्तान्तों का सम्मिश्रण इसी से होता है । फिर भी 'वल्मीक' से उत्पन्न होने के कारण 'वाल्मीकि' शब्द च्यवन में प्रसिद्ध न होकर रामायणकार प्राचेतस महर्षि वाल्मीकि में ही प्रसिद्ध हुआ । एतत्प्रकारेण शाप से भृगुवंश में उत्पन्न होने के कारण भी औपचारिक रूप से उन्हें च्यवनपुत्र कहा गया है; जैसे- कृत्तिवास रामायण और बुद्धचरित (१।४३) में अश्वघोष ने महर्षि वाल्मीकि को च्यवनपुत्र कहा है- ''वाल्मीकिरादौ च ससर्ज पद्यं जग्रन्थ यन्न च्यवनो महर्षिः ।'' इसका यही अभिप्राय है कि पूर्व के लोगों की अपेक्षा उत्तरोत्तर लोगों ने लोकोत्तर कार्य किया था । महर्षि वाल्मीकि ने अनायास ही जिस आदि पद्य (वा.रा.१।२।१५)- ''मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः । यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ।।'' की रचना कर डाली । उसकी रचना उनके पूर्वज बड़े प्रभावशाली महर्षि च्यवन ने भी नहीं की थी ।

किञ्चित् प्रकारान्तर से स्कन्दपुराण नागरखण्ड १२४।१-२- ''यत्र ते मुनयः श्रेष्ठा विप्राश्चौरेण सङ्गताः । यत्र सिद्धिं समापन्नः स चौरस्तत्प्रभावतः ।। वाल्मीकिरिति विख्यातो रामायणनिबन्धकृत् ।'' अन्यत्र भी महर्षि वाल्मीकि को ब्रह्मा का अंश ब्राह्मण ही कहा है (रामायणमीमांसा पृष्ठ ६४) । श्रीविष्णुपुराण के मूर्तिनिर्माण प्रसङ्ग में वर्णित वाल्मीकि रामायणकार महर्षि वाल्मीकि ही हैं । मन्त्ररामायण के प्रसङ्ग में भी महर्षि वाल्मीकि को ब्रह्मा का अंश ब्राह्मण ही कहा गया है । श्रीविष्णुपुराणानुसार ऋक्ष नामक भार्गव महर्षि वाल्मीकि हुए- ''ऋक्षोऽभूद्भार्गवस्तस्माद्वाल्मीकिर्योऽभिधीयते ।'' वाल्मीकिरामायण ७।९४।२५ ''सन्निबद्धं हि श्लोकानां चतुर्विंशत्सहस्रकम् । उपाख्यानशतं चैव भार्गवेण तपस्विना ।।'' आदि वचनों में भी महर्षि वाल्मीकि को भार्गव कहा गया है ।

कुछ वचनों से विदित होता है कि पृथु के प्रपौत्र प्राचीनबर्हिष् राजर्षि ही प्रचेता हुए हैं, उनके ही दस पुत्र प्राचेतस हुए हैं और उन्हीं में दशम एवं अन्तिम महर्षि वाल्मीकि थे, अथवा पूर्व के प्राचेतस मुनि ही शापवशात् विप्र होकर पुनः वाल्मीकि हुए हैं, अथवा भृगु मुनि के ही वंश में अन्तिम वाल्मीकि थे । वही निश्चल होकर तपस्या में संलग्न हुए थे, उनपर वल्मीक बन गया था, पुनः उस वल्मीक से प्रादुर्भूत होने के कारण वाल्मीकि कहलाये ।

ब्रह्मवैवर्त्तपुराण के अनुसार लोकपितामह ब्रह्माजी ने वल्मीकप्रभूत होने से उन्हें वाल्मीकि नाम प्रदान किया था- ''अथाब्रवीन्महातेजा ब्रह्मा लोकपितामहः । वल्मीकप्रभवो यस्मात्तस्माद्वाल्मीकिरित्यसौ ।।'' पुनः २२वें अध्याय में कहा गया है- ''कति कल्पान्तरेऽतीते स्रष्टुः सृष्टिविधौ पुनः । यः पुत्रश्चेतसो धातुर्बभूव मुनिपुङ्गवः ।। तेन प्रचेता इति च नाम चक्रे पितामहः ।।'' अर्थात् कल्पान्तरों के बीतने पर स्रष्टा के नवीन सृष्टिविधान में ब्रह्मा के चेतस् से जो पुत्र उत्पन्न हुआ उन्हें ही ब्रह्मा के प्रकृष्ट चित्त से आविर्भूत होने के कारण प्रचेता कहा गया है । तथा च ब्रह्मा के मानसपुत्र ही प्रचेता हुए

हैं । ब्रह्मा के दस पुत्र मरीचि आदि मन्वादि स्मृतियों में प्रसिद्ध हैं । महा.सम्भवपर्व ७५।४ में भी "दश प्रचेतसः पुत्राः सन्तः पुण्यजनाः स्मृताः" स्पष्ट है । मार्कण्डेयपुराण के अनुसार भी- "उवाच प्रणतो वाक्यं वाल्मीकिं च तपोधनम् । प्राचेतस महाभाग श्रीरामस्य कथां शुभाम् ॥ कथयस्व महाबुद्धे रामस्य परमात्मनः ॥" प्राचेतस मुनि ही महर्षि वाल्मीकि हैं । शिवरामायण में भी-

"पुरा स्वायम्भुवो ह्यासीत्प्राचेतसमहाद्युतिः । ब्रह्मात्मजस्तु ब्रह्मर्षिस्तेन रामायणं कृतम् ॥
शतकोटिप्रविस्तीर्णं नानाकल्पसमुद्भवम् । भार्यां पतिव्रतां साध्वीं तां परित्यज्य स द्विजः ॥
ब्राह्मीं वृत्तिं परित्यज्य चोरकर्म समाचरत् । नारदेनोपदिष्टस्तु तपोनिष्ठां समाश्रितः ॥"

इत्यादि स्थलों में वाल्मीकि को द्विज एवं ब्राह्मी वृत्ति का परित्याग करनेवाला बताया गया है । स्कन्दपुराण ५।१।२४, ७।१।२७८ में महर्षि वाल्मीकि भृगुवंशी सुमति ब्राह्मण और उनकी भार्या कौशिकी के पुत्र कहे गये हैं; जिनका नाम पहले अग्निशर्मा था, बाद में ऋषियों ने वाल्मीकि नाम दिया था ।

श्रीमद्भागवत ३।१३।६ "श्वादोऽपि सद्यः सवनाय कल्पते" के भाष्यकारों ने इस पद्य का तात्पर्य बताया है कि भगवान् के परम पवित्र नामों का श्रवण, कीर्तन, वन्दन एवं स्मरणादि रूप पवित्र वृत्ति से चाण्डाल भी सोमयाजी ब्राह्मण के तुल्य आदरणीय एवं यज्ञादि के फल का अधिकारी हो जाता है । जिसने भगवान् के नामों का उच्चारण किया, उसने मानो तप, हवन, तीर्थस्नान, सदाचारपालन एवं वेदाध्ययनादि सब कुछ कर लिया और उसका फलभागी भी हो गया । महर्षि वाल्मीकि को पूर्वजन्म का चाण्डाल तथा "अर्थात् तदुत्तरजन्मनि" वर्त्तमान में उन्हें ब्राह्मण ही कहा गया है । उपर्युक्त पद्य में 'सद्यः' पद का भाव अत्यन्त गम्भीर है- शूद्रादि से ब्राह्मणयोनि को प्राप्त करना बहुजन्मसाध्य है; जैसे कि- महाभारत के अनुशासन पर्वादि में पशु-पक्षियोनि से बहुत जन्मों के बाद चाण्डाल होना, चाण्डाल का उत्तम कर्मो से सहस्र जन्मों के बाद शूद्र बनना, शूद्र से ३० जन्मों के बाद वैश्यवर्ण में उत्पत्ति, वैश्य का ६० जन्मों के बाद क्षत्रिय होना फिर अधिकारानुसार पवित्र कर्म के प्राबल्य से क्षत्रिय का ६० जन्मों के बाद ब्राह्मण होना बताया है । परन्तु हरि के अनन्य भक्त श्वपच को भी सद्यः अर्थात् बहुत जन्मों को प्राप्त न करके अर्थवाद से पासवाले जन्म में ही सवनाधिकारी (द्विज) हो जाना कहा है; जैसा कि गीता ६।४५,७।१९ के-

"प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्बिषः । अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम् ॥
बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते । वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥"

इन भगवद्वचनों से भी भासित होता है । नारदजी के पूर्वजन्मवृत्तान्त की भाँति महर्षि वाल्मीकि का भी पूर्वजन्म में चाण्डाल होना अभीष्ट हो सकता है, क्योंकि वर्त्तमान जन्म में जातिपरिवर्त्तन का कोई शास्त्रीय विधान उपलब्ध नहीं है । श्रीमद्भागवत ६।१८।४ में ही-

"चर्षणी वरुणस्यासीद्यस्या जातो भृगुः पुनः । वाल्मीकिश्च महायोगी वल्मीकादभवत्किल ॥"

यहाँ श्रीधरस्वामी ने इसकी व्याख्या की है- "चर्षणी वरुणस्य भार्याऽसीत्, पूर्वं ब्रह्मणः पुत्रो भृगुर्यस्यां पुनर्जातो वाल्मीकिर्वरुणस्यैव पुत्रोऽभवत्, एतौ वरुणस्यासाधारणौ पुत्रौ" चर्षणी वरुण की स्त्री थी । पहले ब्रह्मा का पुत्र भृगु हुआ था और फिर चर्षणी से वरुण का पुत्र वाल्मीकि हुआ। वल्मीक से इनकी उत्पत्ति हुई । श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण की रामाभिरामी टीका में वल्मीक से उत्पन्न होने के कारण या वल्मीक नामक ऋषि से उत्पन्न होने के कारण अपत्यार्थ में इनका नाम वाल्मीकि हुआ १।१।१ । कहीं-कहीं वल्मीक को प्रचेता का पर्यायवाची माना गया है (सनातनधर्मालोक भाग ३-२, पृ.३९६), अथवा कुछ काल पर्यन्त चाण्डालकर्म में प्रवृत्त होने से कर्मणा चाण्डाल कह दिया जा सकता है ।

न्यायदर्शन ४।१।६० में भी कहा है कि- "प्रधानशब्दानुपपत्तेर्गुणशब्देनानुवादः, निन्दाप्रशंसोपपत्तेः" जहाँ प्रधान शब्द सङ्गत न हो वहाँ निन्दा आदि से गुणवाद रूप अर्थवाद हुआ करता है । जैसे ब्राह्मकर्म से विहीन जन्मतः ब्राह्मण

को भी ब्राह्मणेतर की उपाधि से सम्बोधित कर दिया जाता है । पुनः मनुस्मृति ३।१७ के अनुसार- ''शूद्रां शयनमारोप्य ब्राह्मणो यात्यधोगतिम् । जनयित्वा सुतं तस्यां ब्राह्मण्यादेव हीयते ।।'' शूद्रा से सन्तान उत्पन्न करने में ब्राह्मणत्व की हानि होती है । अध्यात्म रामायण के अनुसार वाल्मीकि ने शूद्रा से विवाह कर रखा था, उससे सन्तानोत्पादन भी हुआ, अतः ब्राह्मण्य की भ्रष्टता से कर्मचाण्डालत्व की उपपत्ति हो सकती है, यह सम्भव है । पर पातित्य में जाति परिवर्तित नहीं हो जाती, यह शास्त्रीय मत है । इसीलिए तो ऋषियों ने कुकर्माचरणरत वाल्मीकि को भी द्विजाधम ही कहा है- ''किमायासि द्विजाधम !, दुर्वृत्तोऽयं द्विजाधमः'' आदि में तत्काल उसे ब्राह्मणाधम ही कहा गया है । इससे अतिरिक्त शूद्र से ब्राह्मण की कन्या में उत्पन्न सन्तान को चाण्डाल कहा जाता है, यह तो वाल्मीकि या उनके पिता में भी घटती नहीं । ब्राह्मण वाल्मीकि की शूद्रा स्त्री के सन्तान को धर्मशास्त्र की परिभाषा के अनुसार निषादरूप पारशव तो माना जा सकता है, चाण्डाल नहीं ।

शास्त्रों में वास्तविक नहीं, पारिभाषिक रूप से ही ब्राह्मण को भी चाण्डाल कहा गया है । देखें- अत्रिस्मृति ३७१।३७२- ''देवो मुनिर्द्विजो राजा वैश्यः शूद्रो निषादकः । पशुर्म्लेच्छोऽपि चाण्डालो विप्रा दशविधाः स्मृताः ।।'' यहाँ ब्राह्मण के पारिभाषिक दस प्रकारों में एक 'पशु' भी कहा गया है, क्या ये चार पैरवाले सिद्ध हो जायँगे ? अत्रिस्मृति ३८१ में विप्रचाण्डाल की परिभाषा देखें- ''क्रियाहीनश्च मूर्खश्च सर्वधर्मविवर्जितः । निर्दयः सर्वभूतेषु विप्रश्चाण्डाल उच्यते ।।'' यह लक्षण शूद्राचाररत जन्मना ब्राह्मण वाल्मीकि में घटित हो जाने से लक्षणतः चाण्डाल कहा जा सकता है, परन्तु वास्तविक नहीं है ।

मत्स्यमहापुराण में वरुण का वीर्य वल्मीक में गिरने से इनका प्रादुर्भाव हुआ एवं ये वरुणपुत्र कहलाये, ऐसा कहा है । पुनः दो वाल्मीकियों का रहस्य भी चिन्तनीय है; जैसे- एक महर्षि वाल्मीकि दूसरे चाण्डाल वाल्मीकि । श्रीनाभादासरचित 'भक्तमाल' (जिसकी टीका श्रीप्रियादास ने भी लिखी है) में दो वाल्मीकियों का निरूपण किया गया है । वहाँ उन्होंने ६१ संख्यावाले पहले वाल्मीकि के बारे में लिखा है कि- ''आदिकवि महर्षि वाल्मीकि थे तो जन्म से ब्राह्मण, परन्तु भील के द्वारा पाले गये'' आदि, शेष में पूर्वोक्त अध्यात्मरामायण की कथा है । दूसरा ६२ संख्यावाला वाल्मीकि 'भक्तमाल' में वर्णित है, जिसे वहाँ 'श्वपच' (चाण्डाल) बताया गया है, परन्तु उसे गुप्त भगवद्भक्त एवं नामस्मरण में संलग्न स्वीकृत किया गया है । अतः यह सम्भव हो सकता है कि चाण्डालवाल्मीकि की चर्चा करनेवाले भक्तमाल के ६२वें संख्यावाले द्वितीय श्वपच (चाण्डाल) वाल्मीकि को ही अधिकृत कर कह सकते हैं । वस्तुतः श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण के कर्त्ता महर्षि वाल्मीकि से भिन्न जो श्वपच (चाण्डाल) वाल्मीकि हुए हैं, वे ही चाण्डालों के उपास्य पूर्वज हो सकते हैं । इसमें कोई ऐतिहासिक आपत्ति न भी हो तो कोई बात नहीं । अल्पज्ञ सुधारकों एवं उद्धारकों को अपनी भूल सुधार लेनी चाहिए ।

कहीं यह भी लिखा है कि- वाल्मीकि ब्राह्मणपुत्र थे । उनके माता-पिता उन्हें वन में छोड़कर तपस्या करने चले गये । इस बालक को किसी भीलनी ने पाला-पोसा, जिसका नाम 'रत्नाकर' रखा । पुनः स्वजात्यनुकूल एक भीलकन्या से उसका विवाह कर दिया । किरात (भिल्लों) के संसर्ग से इसे अपने स्वरूप की विस्मृति बनी रही । दैववश नारदजी ने स्वरूप का स्मरण कराकर उसका उद्धार किया ।

उपसंहार- महर्षि वाल्मीकि जन्म से ब्राह्मण ही सिद्ध हैं । यद्यपि किरातों की सङ्गति से वह बाल्यकाल में अपना स्वरूप भूल बैठे थे, तथापि ऋषियों की सत्सङ्गति से फिर सँभल गये । मलिन सुवर्ण पुनः अग्नि के संयोग से स्वच्छ सुवर्ण हो गया । भारी तपस्या करके इन्होंने पूर्व का प्रायश्चित्त कर डाला । एक कहावत भी प्रसिद्ध है कि 'सुबह का निकला शाम को घर वापस आ जाय तो भटका नहीं कहा जा सकता' । तब इनको 'चाण्डाल' बतानेवाले भारी भूल कैसे कर रहे हैं ?

पुनः वाल्मीकि का चाण्डालों से सम्बन्ध कैसे हुआ यह भी विचार करना चाहिए । हो सकता है कि वाल्मीकि की अज्ञानावस्था में भीलनी स्त्री के गर्भ से उत्पन्न सन्तानों की परम्परा चल पड़ी हो और उन्होंने वाल्मीकि की तपस्या प्रसिद्ध हो जाने के कारण अपने आप को 'वाल्मीकि' कहना शुरु कर दिया हो । पर वे धर्मशास्त्रविरुद्ध होने से न्यायतः वैध सन्तान नहीं थे, तब उनका प्रायश्चित्त किये हुए तपस्वी ब्राह्मण वाल्मीकि से सम्बन्ध जोड़ना अवैध है । क्योंकि उस समय वे रत्नाकर थे, वाल्मीकि नाम की प्रसिद्धि तो उसके बाद हुई है, अथवा भक्तमाल वाले अन्य दूसरे भक्त श्वपच वाल्मीकि ही इनके पूर्वज हो सकते हैं ।

वस्तुतः स्कन्दपुराण वैष्णवखण्ड वैशाखमाहात्म्य (२१।५५-५६) में श्रीवाल्मीकिजी को पूर्वजन्म में ही व्याध बताया गया है, तब दूसरे जन्म में वल्मीक ऋषि का पुत्र वाल्मीकि इस नाम से ख्यात हुए-

''तस्माद्रामेति तन्नाम जप व्याध निरन्तरम् । धर्मानेतान् कुरु व्याध यावदामरणान्तिकम् ॥
ततस्ते भविता जन्म वल्मीकस्य ऋषेः कुले । वाल्मीकिरिति नाम्ना च भूमौ ख्यातिमवाप्तवान् ॥''

इसके अनुसार वाल्मीकिजी को विलोम 'मरा' नहीं, अपितु अनुलोम 'राम' मन्त्र की दीक्षा दी गई थी । अध्यात्म रामायण के ''अहं पुरा किरातेषु'' का भी यही जन्मान्तरीय 'पुरा' पद का भाव हो सकता है । ये ही पुनः श्रीरामकथा के प्रकाशक हुए । कल्पान्तरीय विभिन्न कथाओं के उपलब्ध होने पर यही निश्चय होता है कि वर्त्तमान कल्प में तो प्रकृष्ट चित्त वाले प्रचेता ब्रह्मा के मरीच्यादि दस पुत्रों में दशम होने के कारण प्राचेतस कहलाये, शापवश भार्गव विप्रवंश में उत्पन्न होने के कारण भार्गव कहलाये एवं कालान्तर में महर्षि वाल्मीकि के नाम से प्रसिद्ध हुए । स्कन्दपुराण के अनुसार इनको स्तम्भ नामवाला और श्रीवत्सगोत्रीय ब्राह्मण बताया गया है, जो पापाचार एवं शूद्राचार में रत था, बाद की कथा पूर्ववत् है । श्रीविष्णुपुराण, श्रीमद्भागवत, वायुपुराण एवं कूर्मपुराण के अनुसार इस कल्प के चौबीसवें व्यास के रूप में भार्गव वाल्मीकि का वर्णन है । जो कालान्तर में दस्यु था वह कालान्तर में महर्षि भी हो सकता है । व्यास के समान ही विभिन्न कल्पों में वाल्मीकि भी विभिन्न होते हैं । अतः कल्पभेद से भी कथाभेद होना सम्भव है, जिसका समन्वय करना चाहिए (रामायणमीमांसा पृ.७९) । स्कन्दपुराण, ब्रह्माण्डपुराणादि के अनुसार वैवस्वत मन्वन्तर के २४वें त्रेता में भगवान् श्रीराम एवं तत्कालीन ही महर्षि वाल्मीकि हुए हैं । अन्यत्र श्रीरामावतारकाल में भेद होने से महर्षि वाल्मीकि के काल में भी भेद होना सम्भव है ।

इस अनुसन्धान से यही स्पष्ट हुआ कि महर्षि वाल्मीकि दिव्य अथवा उच्चकोटि के ब्राह्मण थे और ब्रह्मा के पौत्र थे । साक्षात् भगवत्तत्त्व का अधिकारी समझकर ही ब्रह्मा के पुत्र नारदजी ने उन्हें रामायण का बीज अनुलोम या विलोम महामन्त्र 'राम या मरा' प्रदान किया था । सभी प्रामाणिक ग्रन्थों में रामायणकार महर्षि वाल्मीकि के द्विजेतर होने का गन्धमात्र भी नहीं मिलता । विद्वद्गण समाज से इस भ्रम को दूर करने का प्रयास करें । सनातनी विद्वानों ने सभी विषयों पर गम्भीर चिन्तन पहले से ही कर रखा है, हमें नवीन अनुसन्धान के लिए विशेष श्रम की आवश्यकता नहीं है; केवल ढूँढकर शास्त्रबुद्धि से उसे ग्रहण करना है । मूलतः इस आलेख को हमने सनातनधर्मालोक एवं धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी के साहित्यों से लेकर कुछ अन्यत्र भी श्रम किया है, उन्हें सादर प्रणाम । शुभमिति दिक् .....